अलङ्कारसर्वस्वम्

परिणाम अलंकार

।।आरोप्यमाणस्य प्रकृतोपयोगित्वे परिणाम:।।

आरोप्यमाणं रूपके प्रकृतोपयोगित्वाभावात्प्रकृतोपरञ्जकत्वेनैव केवलेनान्वयं भजते। परिणामे तु प्रकृतात्मतया आरोप्यमाणस्योपयोग इति प्रकृतमारोप्यमाणरूपत्वेन परिणमति। आगमानुगमविगमख्यात्यभावात्सांख्यीयपरिणामवैलक्षण्यम्।तस्य सामानाधिकरण्य-वैयधिकरण्यप्रयोगाद्वैविध्यम्।

आद्यो यथा-

तीर्त्वा भूतेशमौलिस्रजममरधुनीमात्मनासौ तृतीय-

स्तस्मै सौमित्रिमैत्रीमयमुपहृतवानातरं नाविकाय।

व्यामग्राह्यस्तनीभिः शबरयुवतिभिः कौतुकोदञ्चदक्षं

कृच्छ्रादन्वीयमानस्त्वरितमथ गिरिं चित्रकूटं प्रतस्थे ॥

अत्र सौमित्रिमैत्री प्रकृता रोप्यमाणसमानाधिकरणान्तररूपत्वेन परिणता। आतरस्य मैत्रीरूपतया प्रकृते उपयोगात्। तदत्र यथा समासोक्तावारोप्यमाणं प्रकृतोपयोगि तच्चारोपविषयात्मतया तत्र स्थितम् ,अत एव तत्र तद्व्यवहारसमारोपः।एवमिहापि ज्ञेयम्। केवलं तत्र विषयस्यैव प्रयोगः। विषयिणो गम्यमानत्वात्। इह तु द्वयोरप्यभिधानं तादात्म्यात्तयोः परिणामित्वम्।
द्वितीयो यथा-

अथ पक्त्रिमतामुपेयिवद्भिः सरसैर्वक्रपथाश्रितैर्वचोभिः।
क्षितिभर्तुरुपायनं चकार प्रथमं तत्परतस्तुरंगमाद्यैः॥

अत्र राजसंघटने तूपायनमुचितम्। तच्चात्र वचोरूपमिति वचसां व्यधिकरणोपायनरूपत्वेन परिणामः।

- **परिणाम अलंकार के उद्भावक आचार्य रुय्यक**

आचार्य मम्मट से पूर्ववर्ती किसी भी अलंकारिक ने इस अलंकार का उल्लेख नहीं किया है। काव्यप्रकाश के टीकाकारों ने बताया है कि परिणाम अलंकार को उन्होंने रूपक अलंकार में अंतर्भाव कर दिया है। आचार्य रुय्यक से परवर्ती प्रायः सभी आलंकारिकों ने परिणाम अलंकार को रूपक से पृथक् माना है। इससे यह प्रतीत होता है कि परिणाम अलंकार के उद्भावक आचार्य रुय्यक है।

- **आचार्य रुय्यक के अनुसार परिणाम का लक्षण तथा उसका रूपक से भेद**

आरोप में सदा दो वस्तुएं होती है- आरोप विषय तथा आरोप्यमाण विषयी। आरोप विषय उपमेय है एवं आरोप्यमाण विषय उपमान है। उपमान उपमेय का सदा उपकार करता है, क्योंकि एक दृष्टि से उपमेय को आधेय गुण तथा उपमान को गुणाधाता माना जाता है। जब कवि मुख की उपमा चंद्र से देता है तो चंद्र के सौंदर्य की मुख में प्रतीति होती है। इसी सादृश्य प्रतीति के बाद उपमा का कार्य विश्रांत हो जाता है। रूपक अलंकार में जब मुख को कवि चंद्र कहता है तो चंद्र सौंदर्य की मुख में अभेद द्वारा सादृश्य प्रतीति होती है। इसी प्रकार जब मुख में कवि चंद्र की संभावना करता है तो चंद्र-सौंदर्य मुख का उपस्कार करता है। उपमा में यह उपरञ्जन सादृश्यप्रत्यायन तक सीमित है। रूपक अलंकार में वह तादूप्यप्रतीति में और उत्प्रेक्षा में साध्य-अध्यवसाय के सौंदर्य में पर्यवसित होता है। इन तीनों अलंकारों में उपमान उपमेय का उपरञ्जन करता है। वही उसका अंतिम उद्देश्य है। वाक्यार्थ की विश्रांति भी प्रकृतार्थ के उपरञ्जन से हो जाती है। किंतु ***परिणाम अलंकार में कवि जिस आरोप्यमाण (उपमान) का प्रयोग करता है वह प्रकृतार्थ(उपमेय) का उपरञ्जन तो करता ही है, पर साथ ही उसकी प्रकृतार्थ में उपयोगिता भी होती है ।*** (परिणामे तु प्रकृतात्मतया आरोप्यमाणस्योपयोग इति प्रकृतमारोप्यमाणरूपत्वेन परिणमति।)

आगमानुगमविगमख्यात्यभावात्सांख्यीयपरिणामवैलक्षण्यम्।

सांख्यदर्शन में उक्त परिणाम से यह परिणाम अलंकार संपूर्ण भिन्न है। क्योंकि इसमें आगम, अनुगम तथा विगम की ख्याति का अभाव रहता है।

आगमः - आप्तोक्तिः

अनुगमः - व्याप्तिः

विगमः - व्यावृत्तिः

तस्य सामानाधिकरण्यवैयधिकरण्यप्रयोगाद्वैविध्यम्।

परिणाम अलंकार दो प्रकार के होते हैं ।

1. **सामानाधिकरण्य**
2. **वैयधिकरण्य**

सामानाधिकरण्य का उदाहरण यथा –

तीर्त्वा भूतेशमौलिस्रजममरधुनीमात्मनासौ तृतीय-

स्तस्मै सौमित्रिमैत्रीमयमुपहृतवानातरं नाविकाय।

व्यामग्राह्यस्तनीभिः शबरयुवतिभिः कौतुकोदञ्चदक्षं

कृच्छ्रादन्वीयमानस्त्वरितमथ गिरिं चित्रकूटं प्रतस्थे ॥

अन्वयः - आत्मना असौ तृतीयः भूतेशमौलिस्रजम् अमरधुनीम् तीर्त्वा तस्मै नाविकाय सौमित्रिमैत्रीम् आतरम् उपहृतवान्। अथ व्यामग्राह्यस्तनीभिः शबरयुवतिभिः कौतुकोदञ्चदक्षं कृच्छ्रादन्वीयमानः अयं त्वरितं चित्रकूटं गिरिं प्रतस्थे ।

अर्थ - शिव की मौलिमाला गंगा को सीता, लक्ष्मण और स्वयं तीसरे राम ने पार कर उस नाविक को लक्ष्मण की मित्रता उतराई दी । इसके बाद विशाल स्तनों वाली शबर युवतियों के द्वारा को कौतुक भरे नयनों से कष्ट पूर्वक अनुसृत श्री राम शीघ्र ही चित्रकूट पर्वत की ओर चल पड़े।

श्रीराम ने नाविक को लक्ष्मण की मैत्री उतराई दी। यहां प्रकृत कार्य है नदी संतरण। उसके लिए आवश्यक या उपयोगी है उतराई, न कि मैत्री। आरोप की दृष्टि से विषयी है उतराई और विषय है मैत्री। केवल मैत्री का प्रकृत कार्य में उपयोग नहीं है, अतः मैत्री में विषयी उतराई के व्यवहार का आरोप भी करना आवश्यक है। तभी वह प्रकृतार्थ की सिद्धि कर सकेगा। इस प्रकार आरोप्यमाण, न केवल प्रकृतार्थ का उपरञ्जन करता है अपितु उसका कार्य सिद्धि में उपयोग भी है।

रूपक में विषय का आरोप प्रकृतार्थोपरञ्जन कर विश्रांत हो जाता है। किंतु परिणाम में वह आरोपविषय बनकर विश्रांत होता है। जहां पर मुख के ऊपर चंद्र का आरोप होता है, वहां चंद्र का मुख के रूप में कोई उपयोग नहीं है। मुखा में चंद्र के रुप का आरोप मात्र है। रूपक के रूप समारोप और परिणाम के रूप समारोप में थोड़ा अंतर है। परिणाम में न केवल रूप समारोप होता है अपितु व्यवहार समारोप भी होता है। यदि यहां पर प्रश्न उठे कि यह समासोक्ति अलंकार का स्थल है। तो यह कहना आवश्यक हो जाएगा कि समासोक्ति अलंकार में अप्रकृत के व्यवहार का प्रकृत पर आरोप होता है पर वहां अप्रकृत-विषयी का उपादान नहीं होता, वह प्रतीयमान रहता है। किंतु परिणाम अलंकार में विषय तथा विषयी दोनों का उपादान होता है, और फिर अप्रकृत प्रकृतोपयोगी होता है ।

तीर्त्वा भूतेशमौलिस्रजममरधुनीमात्मनासौ..... इस उदाहरण में आतर एवं सौमित्रिमैत्री दोनों समान विभक्ति में प्रयुक्त है अतः यह समानाधिकरण का उदाहरण है।

द्वितीयो यथा-

अथ पक्त्रिमतामुपेयिवद्भिः सरसैर्वक्रपथाश्रितैर्वचोभिः।
क्षितिभर्तुरुपायनं चकार प्रथमं तत्परतस्तुरंगमाद्यैः॥

अन्वयः – अथ प्रथमं पक्त्रिमतामुपेयिवद्भिः सरसैः वक्रपथाश्रितैः वचोभिः क्षितिभर्तुः उपायनं चकार , तत्परतस्तुरंगमाद्यैः (क्षितिभर्तुः उपायनं चकार)।

अर्थ- इसके बाद पहले प्रयोजन युक्त, सरस एवं वक्रोक्तिपूर्ण वचनों से राजा का उपहार किया, तत् पश्चात् घोडों आदि से....

अत्र राजसंघटने तूपायनमुचितम्। तच्चात्र वचोरूपमिति वचसां व्यधिकरणोपायनरूपत्वेन परिणामः।

यहाँ पर विषय तथा विषयी दोनों का उपादान भिन्न विभक्तियों से हुआ है।

- डॉ. अशोककुमारशतपथी

****

****

****

****

***